1 परिचय

भारत में बहुत से किशोर बच्चों विशेषकर लड़कियों के लिए अच्छी शिक्षा, स्वास्थ्य सेवाएं व सुरक्षित कहीं आना–जाना एक समस्या है। तमाम सरकारी व गैर सरकारी संस्थाओं की मदद के बावजूद किशोरवय बच्चों के लिए सामाजिक व आर्थिक सक्रियता, साथ ही इसके दिशा में कार्य करने जो इरादा चाहिए, वह बेहद कमजोर है। इसका एक कारण तो यह है कि इस उम्र के बच्चों को स्वतंत्र, विचारशील या भविष्य के नागरिक के तौर पर नहीं देखा जाता। इसी दिशा में सुधार के लिए हम सशक्तिकरण पर आधारित एक ऐसा परामर्श मॉडल विकसित कर रहे हैं, जिसे नियमित सरकारी विद्यालयों की माध्यमिक स्तर की कक्षाओं में पाठ्यक्रम व अध्यापन संबंधी कार्यकलाप में शामिल किया जा सके।

मलाला फंड के आर्थिक व अन्य सहयोग से चलनेवाली इस योजना *'किशोरवय लड़कियों के लिए सशक्तिकरण पर आधारित परामर्श मॉडलः बिहार में सक्रिय अध्ययन'* के तहत परामर्श का एक ऐसा मॉडल तैयार किया जा रहा है, जिसके तहत लड़के–लड़कियों में नेतृत्व कौशल विकसित करने, साथ ही उनके विवेचनात्मक विचार कौशल को विकसित करने के लिए संसाधन व सुविधाएं विकसित करने का प्रयास है। फिलहाल हम बिहार के पटना व मुज़फ्फरपुर जिले के 10 विद्यालयों की कक्षा 6 व 7 के 11 से 14 वर्ष आयु के 700 बच्चों के साथ काम कर रहे हैं। इसके अलावा हम विद्यालय न जा रहे उन बच्चों के साथ भी काम करने का प्रयास कर रहे हैं, जो उसी क्षेत्र में आसपास रहते हैं।

परामर्श आधारित एक ऐसा मॉडल तैयार करने के लिए, जिसमें हमें यह भी पता लगा सकें कि बच्चे इस से किस तरह प्रभावित हो रहे हैं, हमें बच्चों के अनुभवों को समझना होगा–किशोर बच्चे कैसे अपना समय बिताते हैं, वे किस तरह के खेल खेलते हैं, उनके मित्र कौन हैं, वे किस तरह के कार्य करते हैं और वे इस दुनिया और खुद अपने बारे में क्या सोचते हैं। हम यह सुनिश्चित करना चाहते हैं कि यह परामर्श मॉडल किशोर बच्चे–बच्चियों को इस योग्य बना रहा है कि वे जीवन में परीक्षण व समीक्षा करने योग्य हों व अपने व अपनी आकांक्षाओं के बारे में बनी अवधारणाओं व जानकारी में बदलाव ला सकें। इसके लिए हमने अपने अध्ययन के तहत मुजफ्फरपुर व पटना के चुने हुए विद्यालयों के कक्षा 6 व 7 के सभी विद्यार्थियों के मध्य एक आधारभूत सर्वेक्षण किया।

आमतौर पर आधारभूत सर्वेक्षण किसी कार्य के अंत में उसके प्रभाव को देखने के लिए किया जाता है। पर हम जानते हैं कि स्थानीय लोगों द्वारा अभिव्यक्त की गई स्थान विशेष के अनुरूप उनकी आवश्यकताएं व प्राथमिकताएं भी महत्वपूर्ण हैं। इसकी वजह यह है कि एक जगह के संदर्भों के मूल्य व उम्मीदें दूसरी जगह लागू नहीं हो सकते थे। इसीलिए हमारा परामर्श मॉडल स्थानीय संदर्भों के स्वभाव व विशिष्टताओं के अनुरूप ही विकसित किया जा रहा है और आधारभूत सर्वेक्षण का प्रारंभ में ही उपयोग हो रहा है, ताकि बच्चों के जीवन को ठीक से समझा जा सके और यह सुनिश्चित किया जा सके कि परामर्श मॉडल उनके सामाजिक सांस्कृतिक व आर्थिक संदर्भों के अनुरूप है। इस आधारभूत सर्वेक्षण से प्राप्त जानकारी सीधे हमारे परामर्श मॉडल में शामिल होगी और हम किशोर बच्चों विशेषकर लड़कियों की क्षमताओं व उनके लिए अवसरों को बेहतर कर सकेंगे, ताकि वे सक्रिय हों, अपनी उपस्थिति का एहसास करा सकें, अपनी बात कहें व अपने परिवार व समुदाय में उनकी हिस्सेदारी महत्वपूर्ण बने।

2 परामर्श मॉडल

बच्चों को सशक्त करने में शिक्षा की भूमिका महत्वपूर्ण है व इस सशक्तिकरण के लिए अध्यापन कला के विशिष्ट तरीके बहुत पहले से उपयोग में लाए जा रहे हैं (कबीर, 2005)। शिक्षा की सशक्तिकरण आधारित विविध पहल जैसे कि महिला समाख्या, कस्तूरबा गांधी बालिका विद्यालय के मॉडल, सोशल लर्निंग के तरीके व विश्व भर में लागू हो रहे मॉडलों के आधार पर हम सशक्तिकरण के ढांचे में अध्यापन कला का एक नया रूप तैयार कर रहे हैं, जिसमें किशोर–किशोरियों के लिए विवेचनात्मक विचार प्रक्रिया व सामाजिक हिस्सेदारी को प्राथमिकता दी गई है। इस कार्यक्रम का हमारा मूल उद्देश्य यह है कि हम– (1) किशोरी लड़कियों के लिए परामर्श आधारित **सक्रिय शोध** की एक योजना तैयार कर विकसित करें, (2) इस सक्रिय शोध को इस तरह समेकित कर सकें कि इसके परिणाम मापे जा सकें व इनके आधार पर लंबे समय तक काम हो सके व (3) इसके नीति समर्थन के लिए ऐसी योजना विकसित कर सकें, जिससे यह परामर्श योजना माध्यमिक विद्यालयों के पाठ्यक्रम व अध्यापन कला की पद्धति में शामिल हो सके।

इससे बच्चे अपनी छवि व खुद अपने बारे में अपनी अवधारणाएं बदलने में समर्थ होंगे, उनमें आत्मविश्वास आएगा, साथ ही वे उन सामाजिक मानदंडों, नियमों व सामाजिक संस्थाओं पर प्रश्न कर सकने योग्य हो सकेंगे, जो उनके जीवन को निर्धारित करते हैं। हम यह भी मान कर चल रहे हैं कि इससे परिवार में, विद्यालयों में व दोस्तों के साथ उनकी भागीदारी

में भी बदलाव आएगा व उनमें जीवन के उन लक्ष्यों व सपनों को पूरा करने की क्षमता भी विकसित होगी, जो उन्होंने अपने लिए खुद तय किए हैं। क्योंकि इस परामर्श मॉडल में परिवारों, विद्यालयों व समुदायों को भी शामिल किया गया है, इसलिए इससे संबंधित संपर्कों में बच्चों खासकर लड़कियों की ज़रूरतों को ले कर ज्यादा संवाद व सक्रियता भी होगी।

अगर व्यापक स्तर पर सोचें, तो हमारा मानना है कि एक प्रतिक्रियाशील व विकसित मॉडल होने से इसके प्रभाव को मापने के लिए एक ढांचा तैयार होगा व इसे वर्तमान विद्यालयों के पाठ्यक्रमों में शामिल करने के लिए रूपरेखा भी मिलेगी। यह सुनिश्चित करके कि मलाला परामर्श मॉडल (इसे हम अब एमएमएम कहेंगे) की संघटना लड़कियों के जीवन की वास्तविकताओं व सामाजिक बाधाओं के आसपास विकसित हुई है, हम शिक्षा व सशक्तिकरण की प्रक्रिया पर अपने विचारों को समेकित व सुदृढ़ कर सकेंगे व अध्यापन कला के तरीके भी विकसित कर सकेंगे, जिससे किशोर बच्चे सही मायनों में सशक्त होंगे।

बदलाव की इस प्रक्रिया का पहला चरण था, उन लोगों की पहचान करना, जिनके लिए यह परामर्श मॉडल तैयार होगा। इसके लिए हमने संबंधित जानकारी का अध्ययन कर, बिहार के शिक्षाविदों व वरिष्ठ शिक्षा अधिकारियों के साथ गहन विचार–विमर्श किया और अंत में विद्यालयों से संबंधित जानकारी का विश्लेषण कर मुज़फ्फरपुर व पटना जिलों से 6–6 विद्यालयों का चयन हुआ। इनमें हम 11–14 वर्ष आयु वर्ग (कक्षा 6–8) के लड़के–लड़कियों के साथ काम करेंगे। साथ ही उसी क्षेत्र की वे लड़कियां भी होंगी, जो विद्यालय नहीं जा रही हैं।

इसके बाद हमने ज्ञान व लैंगिक समानता, शिक्षा और सशक्तिकरण संबंधी जानकारी के आधार पर दो परामर्शकारों का चयन किया। हमने यह भी सुनिश्चित किया कि ये परामर्शकार उन्हीं सामाजिक–आर्थिक परिवेश से हों, जहां के ये बच्चे हैं।

Figure 1: The MMM Process Diagram

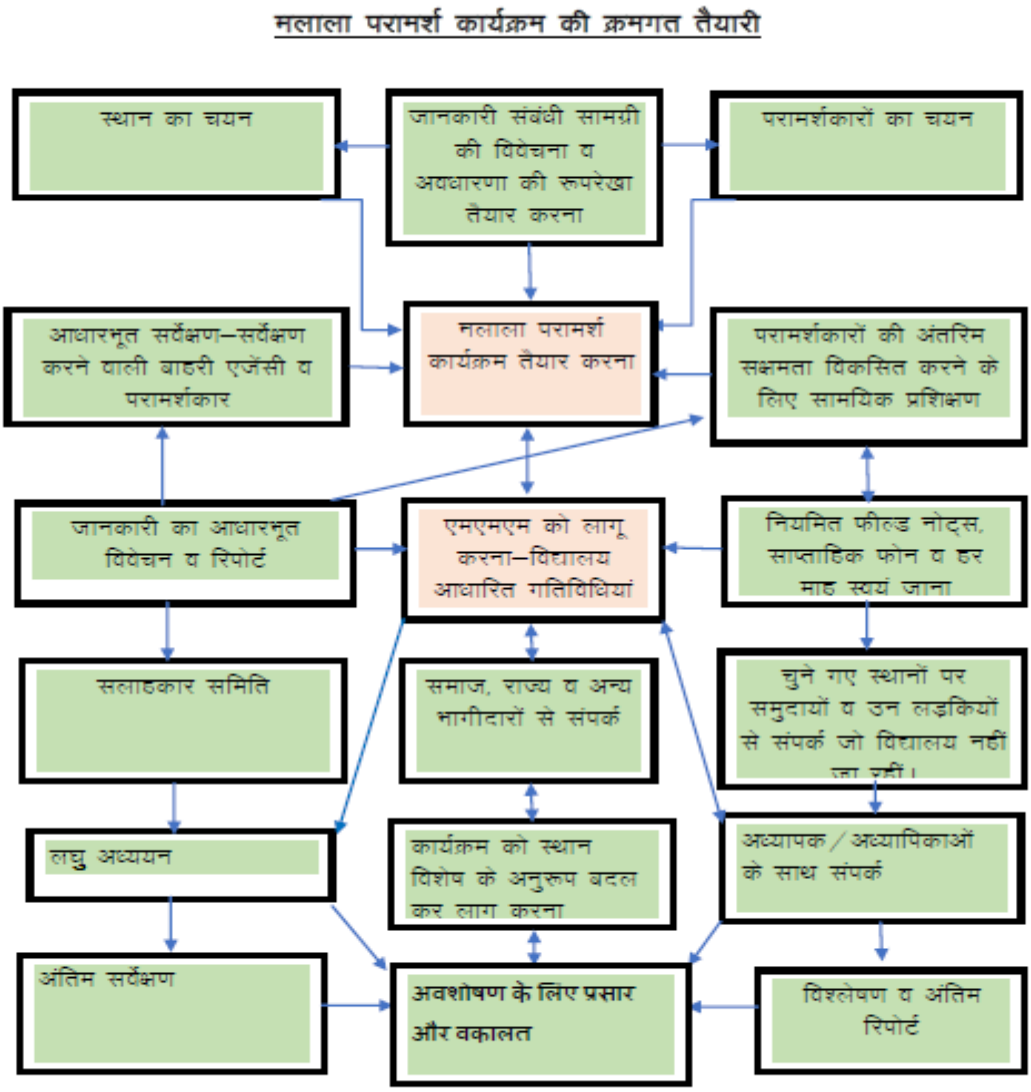

इसके साथ ही एमएमएम गतिविधियां चलाने के लिए कार्यक्रम की रूपरेखा भी तैयार की है। यह कार्यक्रम हमने उपलब्ध जानकारी के विस्तृत अध्ययन व आधारभूत सर्वेक्षण की समीक्षा से मिली समझ के आधार पर विकसित किया है। एमएमएएम कार्यक्रम चलाने की यह पहली रूपरेखा प्राथमिक तौर पर इस बात पर आधारित थी कि बच्चों के साथ मिल बेहतर संपर्क बने व उन्हें संवाद करना व अभिव्यक्ति कौशल सिखाया जाए, इसके साथ ही स्वयं पर सोच सकना सिखाने के लिए कुछ अभ्यास भी हों। इसके बाद परामर्शकारों को ये अभ्यास कराने के प्रशिक्षण दिए गए साथ ही विद्यालयों के साथ इस तरह की व्यवस्था की गई कि ये परामर्शकार प्रत्येक विद्यालय की कक्षा 6 और 7 के विद्यार्थियों के साथ सप्ताह में एक बार कम से कम 3 घंटे तैयार किए गए अभ्यास करें।

इसे लागू करने की प्रक्रिया के दौरान परामर्शकारों का हर तीन महीने में गहन प्रशिक्षण होता है। यह प्रशिक्षण इन गतिविधियों के सिद्धांतों व मूल कारणों पर केंद्रित होता है। हमारे शोधकर्ताओं की टीम हर सप्ताह इन परामर्शकारों से संपर्क करती है व उनके अनुभवों के आधार पर विस्तार से नोट (इन्हें कॉल नोट कहा जाता है) लेती है। परामर्शकार साप्ताहिक या मासिक आधार पर बच्चों के साथ हुए अनुभवों के विविध आयामों पर अपने विचारों की एक रिपोर्ट (इसे मासिक रिपोर्ट कहा जाता है।) देते हैं। इन नोट व रिपोर्ट की विवेचना करने के बाद ही अगले 3 महीने के लिए गतिविधियां तैयार की जाती हैं व प्रशिक्षण की योजना बनाई जाती है। समुदाय के साथ संपर्क को भी परामर्शकार अपने फीडबैक में शामिल करते हैं, जिसे मॉडल विकसित करते हुए ध्यान में रखा जाता है। अगले चरण में हम कुछ विशेष गतिविधियां

शामिल कर रहे हैं, जो अध्यापिकाओं/अध्यापकों व समुदाय के साथ ज़्यादा संपर्क में मदद करेंगी। इससे मॉडल विकसित करने की प्रक्रिया बेहतर होगी।

यह अनुमान किया गया है कि अगले तीन वर्षों की अवधि में एकत्र की गई जानकारी की गुणवत्ता व परिमाण का विश्लेषण हम इस तरह करने में सक्षम होंगे, जो कि परामर्श की रूपरेखा पर आधारित हो, साथ ही एक ऐसे मॉडल को बनाने में भी मदद करे, जो विद्यालयों में लागू हो सके। क्योंकि हमने इस बात का ध्यान भी रखा है कि पता चल सके कि इसे लागू करने में असफलताओं के कारण क्या हो सकते हैं व समुदाय इसे क्यों स्वीकार नहीं कर रहा इसलिए इस सक्रिय अध्ययन के ढांचे में चुनौतियों को पहचान कर निरंतर उनके हल निकालने के विकल्प भी रखे गए हैं। यानी परामर्श आधारित यह मॉडल इस अवधारणा पर तैयार हो रहा है कि इसमें आवश्यता पड़ने पर निरंतर बदलाव हो सकें व किशोर बच्चे इसमें सक्रिय भागीदारी करें।

तालिका 1: विद्यार्थियों संबंधी जानकारी

क्र. सं.	श्रेणी	% लड़कों का	% लड़कियों का	औसत आयु	% अन्य पिछड़ी जातियों के विद्यार्थियों का	% अनु. जाति/जनजाति के विद्यार्थियों का	% मुसलिम विद्यार्थियों का
1	**सरकारी विद्यालय**	40%	60%	11.9	46%	17%	28%
2	**मदरसे**	50%	50%	13.6	0%	0%	100%
3	**केजीबीवी**	0%	100%	11.5	56%	38%	2%
4	**ज़ूली विद्यालय**	0%	100%	12.4	51%	17%	6%
	कुल	35%	65%	12.1	42%	16%	33%

स्रोतः सीबीपीएस आधारभूत सर्वेक्षण, 2018

जैसे–जैसे हम अपनी प्रक्रिया में आगे बढ़ेंगे, सर्वेक्षण से मिली जानकारी को परामर्श मॉडल के निरंतर बदलाव में उपयोग किया जाएगा। इस आधारभूत सर्वेक्षण की रूपरेखा सीबीपीएस ने विविध पठन सामग्री की समीक्षा के आधार पर तैयार की है व हमारे लिए इस सर्वेक्षण का संचालन पटना स्थित एक गैर सरकारी शोध संस्थान सुनय कंसलटेंसी ने किया है। इस संक्षिप्त रिपोर्ट में जो परिणाम दिए गए हैं वे सर्वेक्षण से मिली जानकारी, सीबीपीएस के सदस्यों के फील्ड नोट्स व हर जिले के परामर्शकारों से मिली जानकारी पर आधारित हैं।

3 शिक्षण संस्थान

शिक्षा संस्थान बच्चों के सामाजीकरण के प्राथमिक स्थानों में से एक हैं–जहां वे दुनिया के बारे में समझ बनाते हैं, एक–दूसरे से संपर्क करना सीखते हैं व यह भी सीखते हैं कि जीवन में अपने लक्ष्य पाने के लिए किस तरह कार्य करना है। क्योंकि बच्चे इन संस्थानों में इतना समय बिताते हैं, इसलिए यहां का सामाजिक–सांस्कृतिक परिवेश बेहद महत्वपूर्ण हो जाता है। प्रारंभ में हमने 12 विद्यालयों (तालिका 2 देखें) का चयन किया, मगर कई कारणों से हम इनमें से 2 विद्यालयों में कार्य नहीं कर सके–एक पटना में था और एक मुज़फ्फरपुर में। इसके अलावा हम एक विद्यालय से जानकारी भी नहीं ले सके, क्योंकि वह बंद हो चुका था। इसलिए इस अनुभाग में जो भी विश्लेषण हुआ, वह केवल 11 विद्यालयों का है।

तालिका 1: विद्यालयों की विशेषताएं

क्र. सं.	श्रेणी	संख्या	स्थान	प्रबंधन	विद्यालय का प्रकार	कक्षाएं
1	**सरकारी विद्यालय**	8	**शहर के निकट व ग्रामीण**	**सरकारी विद्यालय**	**सह–शिक्षा व हिंदी माध्यम**	**1–8**
2	**मदरसे**	1	**शहरी**	**सरकार से मान्यता प्राप्त विद्यालय**	**सह–शिक्षा व हिंदी/उर्दू माध्यम ***	**1–12**
3	**केजीबीवी**	1	**ग्रामीण**	**सरकारी विद्यालय**	**लड़कियों के लिए हिंदी माध्यम**	**1–8**
4	**जूली विद्यालय**	1	**शहर**	**गैर सरकारी संस्थान (अनुदान)**	**लड़कियों के लिए हिंदी माध्यम**	**1–7**

केजीबीवी: कस्तूरबा गांधी बालिका विद्यालय
****50% विद्यार्थियों ने इसे हिंदी माध्यम का बताया और बाकी 50% ने उर्दू माध्यम कहा।***
टिप्पणी: पटना के मदरसे की जानकारी वहां जा कर नहीं मिली, क्योंकि अंदर जाने के अनुमति नहीं दी गई।
स्रोत: सीबीपीएस आधारभूत सर्वेक्षण, 2018

3.1 बच्चे

हमने पाया कि प्राथमिक व उच्च प्राथमिक स्तर पर लड़कों से ज़्यादा लड़कियों का नामांकन है। जैसे–जैसे बच्चे उच्च प्राथमिक कक्षाओं की ओर बढ़ते हैं, लड़कियों की संख्या बढ़ती जाती है। उदाहरण के लिए पटना के एक विद्यालय में उच्च प्राथमिक विद्यालय में लड़कियों और लड़कों की संख्या में बहुत अंतर है। हमारा मानना है कि यह शायद उस क्षेत्र के निजी विद्यालयों के कारण है। अकसर यह होता है कि जब किसी परिवार में शिक्षा में बच्चों के लिए चयन की स्थिति आए, तो माता–पिता लड़कों को निजी विद्यालय में और लड़कियों को सरकारी विद्यालय में भेजते हैं।

नामांकन की इस प्रवृत्ति के अतिरिक्त हमें यह भी पता चला कि बच्चों का नामांकन कितना भी हो, वे नियमित रूप से कक्षा में नहीं आते। नामांकन और उपस्थिति की दर बहुत से विद्यालयों में समान नहीं थी। कम उपस्थिति के कारण हमने इन विद्यालयों में बच्चों की समझ व साक्षरता कौशल का भी अध्ययन किया। पता चला कि दोनों विद्यालयों में साक्षरता की दर बहुत कम है, हालांकि मुज़फ्फरपुर में पटना से भी ज़्यादा थी। मुज़फ्फरपुर के कुछ विद्यालयों में कुछ ही बच्चो लिख–पढ़ पाते थे। यह वाकई चिंतनीय स्थिति है।

3.2 शिक्षक

एमएमएम में हमने जो भी गतिविधियां तैयार की हैं, उनमें से बहुत सी ऐसी हैं, जिनमें अध्यापिकाओं/अध्यापकों की सक्रिय भागीदारी आवश्यक है। उन्हें ही इस तरह कार्य करना है कि बच्चे ज्ञान उचित ढंग से प्राप्त करें व उसका सही उपयोग भी करें। जब हम अध्यापिकाओं/अध्यापकों की संख्या पर नज़र डालते हैं, तो लगभग सभी स्थानों पर अध्यापिकाओं की संख्या अध्यापकों ज़्यादा दिखती है। और यह भी कि अन्य पिछड़ा वर्ग व सामान्य वर्ग की अध्यापिकाएं/अध्यापक अन्य सामाजिक वर्गों की अपेक्षा ज़्यादा हैं। हमने विद्यार्थियों व अध्यापिकाओं/अध्यापकों के अनुपात को भी देखा, ताकि पता चले कि बच्चों व उनके बीच के संपर्क की स्थिति को समझा जा सके। पता चला कि अनुपात काफी ऊंचा है–(1:42 औसतन)। सिर्फ एक विद्यालय में यह 1:30 से कम मिला।

तालिका 3: अध्यापिकाओं/अध्यापकों की विशेषताएं

क्र. सं.	विद्यालय का नाम	विद्यार्थी व अध्यापिका/अध्यापक का अनुपात	% अध्यापिका/अध्यापक स्नातक या उससे ज़्यादा	% जिन्होंने बी.एड किया	% महिला अध्यापिका	% अनु. सूचित जाति/जनजाति	% अन्य पिछड़ा वर्ग	% मुसलिम अध्यापिका/अध्यापक
1	**सरकारी विद्यालय**	1:41	53.6%	35.8%	55.4%	12.5%	50%	8.9%
2	**मदरसे**	1:53	77.8%	0%	0%	0%	0%	100%
3	**केजीबीवी**	1:100	100%	0%	100%	100%	0%	0%
4	**जूली विद्यालय**	1:39	54.6%	27.3%	100%	जति संबंधी प्रश्नों के उत्तर देने से मना किया।		
	कुल	1:42	57.1%	29.9%	55.8%	10.4%	36.4%	18.2%

टिप्पणी: पटना के मदरसे की जानकारी वहां जा कर नहीं मिली, क्योंकि अंदर जाने के अनुमति नहीं दी गई।
स्रोत: सीबीपीएस आधारभूत सर्वेक्षण, 2018

अध्यापिकाओं/अध्यापकों व विद्यार्थियों के बीच के अनुपात यानी पीटीआर में बहुत अंतर है और बच्चों के लिए अध्यापिकाएं/अध्यापक उपलब्ध नहीं हैं, इसकी एक वजह यह है कि उन्हें अपने कार्य के अतिरिक्त और भी कार्य करने पड़ते हैं। हमने देखा कि सभी विद्यालयों में उन्हें पढ़ाने के अलावा अन्य ड्यूटी के लिए भी बुला लिया जाता है। इस कारण से नियमित तौर पर दो या तीन अध्यापिकाएं/अध्यापक विद्यालय नहीं आ पाते।

3.3 विद्यालय

कुल मिला कर हमने देखा है कि विद्यालय बच्चों के घर से ज़्यादा दूर नहीं हैं और वे अकसर पैदल ही पढ़ने चले जाते हैं। इसके अलावा ज़्यादातर विद्यालयों की इमारतें पक्की हैं, हालांकि कुछ इमारतों में दीवारें और फर्श टूटे हैं और उन्हें थोड़ी मरम्मत चाहिए। जब इन विद्यालयों में पढ़ने–पढ़ाने की स्थिति हमने देखी तो पाया कि दो विद्यालयों को छोड़ कर ज़्यादातर के पास हर कक्षा के लिए अलग कमरा नहीं है। हालांकि विद्यालय अपने उपलब्ध साधनों के जरिए जितना हो सके ठीक से काम करने का प्रयास कर रहे थे। उदाहरण के तौर पर एक विद्यालय के प्रबंधन ने पास में ही एक कमरा किराए पर लिया हुआ था, ताकि कक्षाएं वहां लगाई जा सकें। एक दूसरे विद्यालय ने दो शिफ्ट में कक्षाएं लगाई हुई थीं जिससे सब बच्चे कक्षा में बैठ सकें।

हमने अपने अध्ययन में विद्यालयों की चारदीवारी का ज़िक्र भी किया है, क्योंकि बच्चों के खेलने व भाग–दौड़ के लिए सुरक्षित स्थान का होना आवश्यक है। चारदीवारी बच्चों के मध्य सामुदायिक भावना भी पैदा करती हैं। हमने जितने भी विद्यालय चुने, उनमें से सिर्फ 5 में ही चारदीवारी थी। यह भी देखा गया कि पटना के एक विद्यालय में चारदीवारी न होने के कारण बहुत से गांव वाले, किसान व पशु नियमित तौर पर बीच में से गुज़रते हैं। इसका मतलब यह भी है कि वहां बच्चों को खेलने, व्यायाम या इधर–उधर घूमने के मौके न के बराबर हैं।

साफ पेयजल का प्रबंध सभी विद्यालयों में था। ज्यादातर में परिसर में ही हैंडपंप/चापाकल थे। दो विद्यालय में बच्चों के लिए आर ओ का पानी भी उपलब्ध था।

विद्यालय में शौचालय होना और उनका ठीक से कार्य करना अत्यंत आवश्यक है, खासकर किशोरी लड़कियों के लिए। हमने पाया कि मुज़फ्फरपुर में एक विद्यालय को छोड़ कर कहीं भी लड़के–लड़कियों के अलग शौचालय नहीं थे। वहीं पटना में विद्यालयों व एक गैर सरकारी संस्थान के संयुक्त प्रयास से एक को छोड़ कर सभी विद्यालयों में लड़के–लड़कियों के अलग शौचालय थे। हालांकि ज़्यादातर विद्यालयों में शौचालय थे, पर उनका उपयोग अलग समस्या थी। उदाहरण के तौर पर एक विद्यालय में टॉयलेट सीट टूटी हुई थी। एक और विद्यालय में लड़के–लड़कियों के शौचालय इतने पास बनाए गए थे कि दोनों ही वहां जाने में हिचकते थे।

तालिका 4: विद्यालयों में मूलभूत सुविधाएं

	विद्यालय	% चारदीवारी वाले विद्यालय	% विद्यालय जहां पुस्तकालय नहीं चल रहे	% विद्यालय जहां लड़कियों के लिए अलग शौचालय हैं।	% विद्यालय जहां बिजली है।	% विद्यालय जहां अपर प्राथमिक कक्षाओं के लिए अलग कमरे हैं
1	**सरकारी विद्यालय**	25%	12.5%	25%	25%	62.5%
2	**मदरसे**	100%	0%	0%	100%	100%
3	**केजीबीवी**	100%	0%	NA	100%	0%
4	**जूली विद्यालय**	100%	100%	NA	100%	100%
	कुल	63.6%	18.2%	36.4%	63.6%	63.6%

टिप्पणी: पटना के मदरसे की जानकारी वहां जा कर नहीं मिली, क्योंकि अंदर जाने के अनुमति नहीं दी गई।
स्रोतः सीबीपीएस आधारभूत सर्वेक्षण, 2018

अगर बच्चों के लिए सीखने के अवसर देखे जाएं, तो किसी भी विद्यालय में पुस्तकालय के नाम पर अलग से कोई कमरा नहीं था। हालांकि हर विद्यालय ने ऐसी जगह जरूर बनाई हुई थी, जिसे 'पुस्तकालय' कह सकते हैं। उदाहरण के लिए एक विद्यालय में एक बेंच पर कुछ किताबें रखी थीं। एक दूसरे विद्यालय में यह सुविधा थी कि पाठ्य पूस्तक न लाने पर बच्चे विद्यालय से किताब ले सकते हैं। कुछ विद्यालयों में पढ़ने के लिए किताबें थीं, पर उन्हें पढ़ने के लिए टाइम टेबल में कोई समय नहीं दिया गया था। कहीं पर भी बच्चों को पढ़ने के लिए घर पर किताबें ले जाने की अनुमति नहीं थी।

हमने पाया कि कक्षाओं में बैठने की व्यवस्था व सुविधा भी बता रही थी कि विद्यालयों में लड़कियों को ले कर कितना पक्षपात है। दोनों जिलों के प्रत्येक विद्यालय में बच्चों के बैठने के लिए बेंच या दरी हैं। कौन बेंच पर बैठेगा और कौन दरी पर यह इससे तय होता है कि आप लड़की हैं या लड़का। एक विद्यालय में लड़कों के लिए बेंच थीं और लड़कियों को दरी पर ही बैठने की अनुमति थी। अन्य विद्यालयों में बड़ी कक्षा के बच्चे बेंचों पर बैठते थे और छोटी कक्षा के नीचे दरी पर। बैठने के लिए कम बेंच होने का प्रभाव सीखने पर पड़ता है। क्योंकि नीचे बैठना सब बच्चों के लिए सुविधाजनक नहीं होता। खासतौर से ठंड में।

मिडडे मील एक निजी विद्यालय को छोड़ कर सब जगह दिया जाता है। हमने पाया कि इसका सकारात्मक प्रभाव बच्चों की उपस्थिति पर पड़ता है। पर यह भी देखा कि खाने के बाद बच्चे तुरंत विद्यालय से चले जाते हैं। एक जगह तो एक अध्यापिका ने यह भी बताया कि भोजन के बाद पूरा विद्यालय खाली हो जाता है। तो मिड डे मील के फायदे तो हैं, पर विद्यालय की उपस्थिति इससे प्रभावित होती है। हमें ऐसे तरीके ढूंढ़ने चाहिएं कि लोग विद्यालय को पोषण का केंद्र न मान कर शिक्षण संस्थान समझें।

संक्षेप में यह कि अध्ययन के लिए हमने विविध प्रकार के विद्यालय लिए, मगर कुछ मुद्दे सभी जगह समान थे जैसे कि उपस्थिति, अध्यापिकाओं/अध्यापकों की उपलब्धता, आधारभूत सुविधाएं व सरकारी योजनाओं का प्रभाव। इन बातों को ध्यान में रखते हुए अब हम परिवार पर चर्चा करेंगे, जो बच्चों के जीवन को सीधे–सीधे प्रभावित करता है।

4 परिवार

परिवार व घरेलू परिवेश, जिसमें बच्चे बड़े होते हैं, उनके जीवन के प्रति दृष्टिकोण को बहुत प्रभावित करते हैं–कैसे वे दुनिया को देखते हैं, कैसे अपने खुद के बारे में सोचते हैं, उन्हें सांस्कृतिक व सामाजिक रूप से क्या ज़्यादा अच्छा लगता है, साथ ही वे अपने आसपास की दुनिया के बारे में जानने व सीखने के लिए कितने तैयार हैं। इसलिए अपने अध्ययन के लिए हमने परिवारों के सामाजिक–आर्थिक पक्ष व अन्य विशिष्टताओं का भी अध्ययन किया जिससे पता चल सके कि ये किशोरवय के बच्चों को किस प्रकार प्रभावित करते हैं।

4.1 पारिवारिक परिस्थितियां

पारिवारिक परिस्थितियां किशोर बच्चों के जीवन पर प्रभाव डालती हैं। हमने पहले देखा कि बच्चे किस प्रकार के घरों में रहते हैं। पता चला कि लगभग आधे (53%) बच्चे पक्के घरों में रहते हैं। बाकी आधे (46%) अधपक्के या कच्चे घरों में रहते हैं। पटना में पक्के घर ज़्यादा थे, लगभग दो–तिहाई (69%)। हमने हर घर में शौचालय की स्थिति भी देखी। पता

चला कि जिन घरों में हमने सर्वेक्षण किए उन बच्चों में 70% के यहां घर के अंदर या बाहर अपना निजी शौचालय था। लगभग 25% बच्चे अभी भी खुले में शौच के लिए जाते हैं। पटना में 78% और मुज़फ्फरपुर में 62% बच्चों के यहां निजी शौचालय थे।

हमने यह पता लगाने का भी निश्चय किया कि बच्चों के लिए उनके घरों में कितनी जगह उपलब्ध है। इस जानकारी के जरिए परिवार की निर्धनता, एक घर में सदस्यों की संख्या के अनुपात में मकान में जगह व कितनी जगह उनके पास है कि आवश्यकता पड़ने पर वे मकान में और कमरे बना लें यह समझने में मदद मिली। हमने इस जानकारी के जरिए यह भी समझा कि इस स्थिति में एक सदस्य के पास कितनी निजता हो सकती है। हमने पाया कि 9.2% विद्यार्थी एक कमरे के मकान में अपने परिवार के साथ रहते हैं। 2, 3 और 4 कमरे के मकान क्रमशः 28%, 22% और 19% बच्चों के थे।

जब हमने मकानों के घनत्व को देखा, तो पता चला कि आधे से ज़्यादा बच्चे ऐसे घरों में रहते हैं, जहां एक कमरे में दो या उससे कम सदस्य रहते हैं। इनमें से 21% परिवार के दो अन्य सदस्यों के साथ एक ही कमरे में रहते हैं और इनमें से एक–चौथाई तीन या ज़्यादा सदस्यों के साथ एक कमरे में रहते हैं। पटना और मुज़फ्फरपुर के बीच इस स्थिति में कोई खास अंतर नहीं था।

परिवार की सामाजिक व आर्थिक स्थिति क्या है, इसका अनुमान घर में उपलब्ध सामान से लगाया जा सकता है। इस के लिए उनके घर के सामान की जानकारी महत्वपूर्ण थी। हमारे आंकड़े कहते हैं कि मुज़फ्फरपुर के घरों में पटना के घरों की तुलना में कम सामान था (4.8% की तुलना में 5.9%). हालांकि मुज़फ्फरपुर के घरों में कृषि संबंधी सामान पटना के घरों से ज़्यादा था। शायद वहां की ग्रामीण आवश्यकताओं के कारण। अगर हम ग्रामीण क्षेत्र के घरों को देखें, तो मुज़फ्फरपुर के लगभग 80% घरों में कम से कम एक कृषि संबंधी वस्तु या ज़्यादातर के पास एक पशु अवश्य था, जबकि पटना में यह आंकड़ा 29% था। इससे हमारी जानकारी यह बताती है कि मुज़फ्फरपुर में ज़्यादातर लोग अभी भी पशु पालते हैं और शायद गुज़र–बसर के लिए कुछ हद तक या पूरी तरह उन्हीं पर निर्भर हैं।

घरों में जो सामान ज़्यादातर सभी के घर में थे, उनमें हैं मोबाइल फोन (100%), चारपाई (98%), बिजली का पंखा (91%), गैस (84%) और गैस स्टोव (82%)। जो सामान कम घरों में मिला, वह था मोटर साइकिल (36%), फ्रिज(22%) और कार (3%)। हमने यह भी पता किया कि फ्रिज जैसी सुविधाएं, जिसमें बिजली की ज़रूरत ज़्यादा होती है पटना के 32% घरों में था और मुज़फ्फरपुर के सिर्फ 9% घरों में।

4.2 पारिवारिक परिस्थितियां

माता–पिता का शैक्षणिक स्तर बच्चे की शिक्षा व उसके संपूर्ण विकास को प्रभावित करता है। उच्च शिक्षा से प्राप्त सामाजिक पूंजी (और अकसर आजीविका भी) अगली पीढ़ी तक जाती है और उसे जीवन में कुछ करने के अवसर ज़्यादा मिलते हैं। इसके विपरीत निम्न सामाजिक–आर्थिक स्थिति या माता–पिता का कम पढ़ा–लिखा होना परिवार के आपसी संवाद व संपर्क व आकांक्षाओं को प्रभावित कर सकता है, जिससे लंबे समय में बच्चों की शिक्षा व जीवन में कुछ कर जाने के रवैये पर भी प्रभाव पड़ता है।

हमने अपने अध्ययन में पाया कि किशोर बच्चों के 26% पिता पूरी तरह अशिक्षित थे, जबकि उनमें 41% उच्च प्राथमिक या उससे ज़्यादा के स्तर तक पढ़े थे और सिर्फ 5% के पास ही कोई व्यावसायिक प्रशिक्षण या डिगरी थी। इनमें 40% बच्चों की मां पूरी तरह अशिक्षित थीं और 29% ने प्राथमिक या उससे ज़्यादा शिक्षा पाई थी। सिर्फ 1% मांओं ने ही कोई व्यावसायिक प्रशिक्षण या डिगरी हासिल की थी। हम विशेष तौर पर यह भी पता करना चाहते थे कि माता–पिता की जानकारी बच्चों को किस तरह प्रभावित करती है। इसके लिए हमने बच्चों की विविध भाषाओं की जानकारी की पड़ताल की। पता चला कि जिन बच्चों को अंग्रेज़ी आती थी, उनमें 49% की मां उच्च प्राथमिक या उससे ज़्यादा पढ़ी हुई थीं। वहीं 39% बच्चे ऐसे थे, जिनकी मां प्राथमिक से कम या बिलकुल ही शिक्षित नहीं थीं।

तालिका 5: घरों की स्थिति

थ्जला	पटना	मुज़फ्फरपुर	कुल
पक्की छत वाले घरों का %	69%	34%	53%

निजी शौचालय वाले घरों का %	78%	62%	70%
दो या उससे कम कमरों के घरों का %	36%	40%	37%
अशिक्षित मांओं का %	35%	47%	40%
प्राथमिक या उससे ज़्यादा पढ़ी मांओं का %	32%	26%	29%
उन परिवारों का % जिनके यहां से कम से कम एक सदस्य दूसरे शहर बाहर गया है।	18%	42%	29%
बाहर जाने वाले सदस्यों में कमाने के लिए गए सदस्यों का %	74%	92%	86%
बाहर जाने वाले सदस्यों में पढ़ाई के लिए गए सदस्यों का %	23%	4%	11%
ऐसे घरों का का % जहां कम से कम एक कृषि संबंधी संपत्ति या सामान है	29%	80%	53%

स्रोतः सीबीपीएस आधारभूत सर्वेक्षण, 2018

माता–पिता की शिक्षा की तरह ही उनके रोज़गार की प्रकृति भी बच्चे की शिक्षा, उसकी सक्रियता व उनके द्वारा भविष्य में करनेवाले काम को प्रभावित करती है। जब हमने सैंपल परिवारों के सदस्यों के विविध कार्यों का विश्लेषण किया तो पाया कि उनमें 39% विद्यार्थी थे। ये ज़्यादातर हमारे सैंपल विद्यार्थियों के भाई–बहन थे। इसके बाद रोज़गार की अगली श्रेणी थी अवैतनिक घरेलू कार्य(16%), जो प्राथमिक तौर पर घर की महिलाएं (95%) करती हैं। लगभग 10% कोई व्यवसाय कर रहे थे, 6% ने कहा कि वे किसी फैक्टरी में काम करते हैं, 3% ने बताया कि वे निर्माण स्थलों पर मज़दूर हैं, 3% अपनी ही ज़मीन में खेती करते हैं, 2% रिक्शा चलाते हैं, 2% दर्जी हैं और 2% दिहाड़ी मज़दूर हैं। जब हमने काम का महिला–पुरुष में बंटवारा देखा, तो पाया कि ज़्यादातर पुरुष फैक्टरी में काम करते हैं (97%), निर्माण स्थल के मज़दूर (96%) या रिक्शा चालक (99%) हैं।

आंकड़ों से यह स्पष्ट है कि ज़्यादातर बच्चों के परिवार के सदस्य गैरसंगठित क्षेत्र में काम करते हैं। अनौपचारिक व असंगठित कामगार के परिवार का सामाजिक व आर्थिक पूंजी से क्या रिश्ता है, यह सभी को पता है। ज़ाहिर है कि इन परिवारों के बच्चे बेहद कमज़ोर स्थिति में होते हैं। इनके जीवन में भी वही अनिशिचिंतताएं होती हैं, जो इनके माता–पिता के जीवन में रही हैं।

इनकी इस कमज़ोर स्थिति को विस्तार से समझने के लिए हमने उनके परिवारों के उन सदस्यों के बारे में भी बात की, जो काम की तलाश में राज्य से बाहर गए हैं। बिहार से प्रवासी मज़दूर तमाम दूसरे राज्यों में काम के लिए जाते हैं। हमने पाया कि जिन बच्चों के बीच हमने सर्वेक्षण किया उनमें 30% ऐसे हैं, जिनके परिवार का कोई न कोई सदस्य बाहर गया है। बाहर जाने वाले लोगों में 92% पुरुष हैं, इनमें 44% ऐसे हैं, जो किसी न किसी विद्यार्थी के पिता हैं और 48% ऐसे ही हैं, जो परिवार के ही अन्य पुरुष सदस्य हैं। इन बाहर जानेवालों में लगभग आधे ऐसे हैं, जो साल में दो–तीन बार बाहर जाते हैं और लगभग 41% साल में एक बार बाहर जाते हैं। हमारे सैंपल में बाहर जानेवाले लगभग आधे ऐसे हैं, जो 10 से 12 महीने के लिए बाहर जाते हैं, जबकि इनमें 21% ऐसे हैं, जो 6 महीने से कम के लिए बाहर जाते हैं। जिन दिनों खेती का काम कम होता है, ये लोग तभी बाहर जाते हैं।

82% बच्चों ने बताया कि बाहर जाने का मुख्य कारण काम है और लगभग 10% शिक्षा प्राप्ति के लिए बाहर गए हैं।

जब हम बाहर जानेवालों के जिलेवार आंकड़े देखते हैं, तो पता चलता है कि मुज़फ्फरपुर जिले से जानेवालों में 91% काम के लिए बाहर गए हैं और सिर्फ 4% पढ़ाई के लिए गए हैं। जबकि पटना में 61% काम के लिए और 22% पढ़ाई के लिए गए हैं।

इससे स्पष्ट होता है कि किसी स्थान विशेष की सामाजिक–आर्थिक परिस्थितियां बाहर जाने के कारणों को प्रभावित करता है।

विश्लेषण से यह भी कहता है कि जिन बच्चों के साथ हम काम कर रहे हैं, वे परिस्थितियों के कारण समान नहीं हैं। कुछ बच्चे सामाजिक–आर्थिक पैमानों पर दूसरों से बेहतर हैं, जैसे कि उनके जीवन की परिस्थितियां, सफाई–स्वच्छता व आने–जाने की उनकी सुविधाएं आदि। हम परिवार की शैक्षिक स्थिति व रोज़गार आदि भी देखते हैं, ताकि हमें उन बच्चों के सामाजिक पक्ष को समझने में मदद मिले, जिनके साथ हम काम कर रहे हैं।

5. बच्चों का जीवन

एमएमएम की रूपरेखा तैयार करते समय हम लोगों के लिए यह जरूरी था कि बच्चों के जीवन के यथार्थ को समझें, बजाय इसके कि फासले से उनकी जिंदगी की कल्पना कर एक धारणा बना लें। सबसे पहले हम यह समझ लेना चाहते थे कि वे अपना समय कैसे बिताते हैं। और इसके लिए हमने उन तरीकों का निरीक्षण किया, जिससे बच्चे अपने जीवन के मायने खुद ही समझते–बूझते हैं और जो उनके प्रतिदिन की गतिविधियों को निर्धारित करते हैं।

सबसे पहले यह बात सामने आयी कि बच्चे अपना अधिकतर समय विद्यालय में बिताते हैं। जाहिर है बच्चों के लिए आपस में मिलने–जुलने और सामाजिकता निबाहने का ज्यादातर अनुभव भी किसी न किसी शैक्षणिक संस्थान के अंदर ही होता है। विद्यालय में बिताये समय, ट्यूशन की पढ़ाई के समय और विद्यालय से आने के बाद घर में सबक तैयार करने के समय को जोड़ कर देखने पर पता चला कि बच्चे एक दिन में सात घंटे से ज़्यादा का समय सिर्फ स्कूली पढ़ाई में बिताते हैं। इस संबंध में लिंग के आधार पर अंतर (लड़कियों के 453 मिनट की अपेक्षा लड़कों के 449 मिनट) बहुत कम है।

ध्यान देने योग्य एक अन्य बिंदु था, बच्चों द्वारा खेलने और फुरसत में बिताया गया समय। इसमें यह तथ्य सामने आया कि लड़का हो या लड़की बच्चे एक दिन में तकरीबन 3.1 घंटे खेल से जुड़ी गतिविधियों में या फुरसत में बिताते हैं। हम यह भी पता लगाना चाहते थे कि ये बच्चे अपनी पारिवारिक खेती के काम में या अन्य कार्यों में भी हाथ बटांते हैं क्या। ऐसा लगा कि अधिकतर बच्चों ने इस सवाल को ठीक से समझा नहीं, क्योंकि 428 लड़कियों और 202 लड़कों ने इस बात का जवाब नहीं दिया। जिन बच्चों ने अपनी पारिवारिक खेती के काम में या अन्य कामों में हाथ बंटाने के मुद्दे पर बातचीत की, उनमें से 28 लड़कियों के अनुसार वे हर रोज़ 1.45 घंटे पारिवारिक काम बिना किसी एवज के करती हैं और इनकी तुलना में लड़के इस काम में 1.76 घंटे का समय बिना किसी एवज के लगाते हैं।

परिवार में लैंगिक भेदभाव को जानने का सबसे आसान तरीका है घर की स्त्रियों और लड़कियों द्वारा परिवार के लोगों की देखभाल के लिए किये जानेवाले कामों का विश्लेषण। पहले से मौजूद दस्तावेज़ों में और किशोरियों से संबंधित हमारे अपने अध्ययन में यह पाया गया कि परिवार में देखभाल की अधिकतर ज़िम्मेदारी लड़कियों की होती है, जबकि लड़के खेलने व अन्य गतिविधियों में समय बिताते हैं। यहां भी वही परिणाम सामने आया। लड़कों द्वारा इस तरह के कार्य में 94 मिनट बिताने की तुलना में लड़कियां औसतन 117 मिनट का समय बिताती हैं। दरअसल जब हमने ऐसे बच्चों की पड़ताल की, जो घर का काम बिना किसी पारिश्रमिक के करने में अच्छा–खासा समय लगाते हैं, तो यह स्पष्ट हुआ कि लड़कियों का औसत प्रतिनिधित्व अधिक (13 लड़कों की तुलना में 42 लड़कियां) है, जो पूरे दिन का 15 प्रतिशत समय घर व लोगों की देखभाल के काम करने में बिताती हैं। हालांकि जब हम समय विभाजन को औसत में देखते हैं (चित्र 2 और 3), तो यह अकसर नजर में नहीं आता। इससे पता चलता है कि लिंग आधारित यह भेदभाव, खासकर उच्चतर व निम्नतर स्तर पर, परिवार में सहज स्वीकृत है।

जब हमने देखभाल के इन कार्यों के विवरण को देखा, तो लिंग पर आधारित एक मजबूत स्वरूप सामने आया। तकरीबन सभी लड़कियां खाना बनाने (95%), सफाई करने (81%) और कपड़े धोने का (86%) कुछ न कुछ काम करती हैं। जो गतिविधियां लिंग पर कम आधारित होती हैं, जैसे कि पानी भरना या राशन खरीदना, हमने पाया कि लड़कों का प्रतिशत इन गतिविधियों को करने में धीरे–धीरे बढ़ा। उदाहरण के लिए करीब 32 % लड़कों के अनुसार वे पानी भरकर लाने का काम करते हैं और तकरीबन 55% लड़के राशन खरीदकर लाते हैं। लिंग आधारित काम के बंटवारे का यह स्वरूप हमारे समाज के हर धर्म, क्षेत्रीय विविधता और जाति में व्याप्त है यानी सर्वव्यापी है और यह अच्छा खासा प्रमाण है कि किशोरी लड़कियां व स्त्रियां कार्यों का असमान बोझ उठा रही हैं।

बच्चों के सामाजिक जीवन को समझने के लिए हमने उनके मित्रों व अन्य सामाजिक संपर्कों पर ध्यान दिया, क्योंकि ये संबंध बच्चों की व्यक्तिगत और सामुहिक पहचान बनाने में महत्वपूर्ण भूमिका अदा करते हैं, उनके जीवन के दबाव व तनावों से निपटने में मदद करते हैं और आपस में मिलने–जुलने व अनुभव साझा करने की क्षमता के कौशल विकसित करने में सहायक होते हैं। हमने पाया कि 81% विद्यार्थियों के अनुसार उनके दोस्त विद्यालय में भी हैं और विद्यालय के बाहर भी, यह उनके दोस्तों की मजबूत मंडली और बड़े दायरे की ओर संकेत है।

जब हमने दोस्तों की इस मजबूत मंडली और बड़े दायरे को लिंग के संदर्भ में देखा, तो पाया कि अधिकतर लड़के और लड़कियों की दोस्ती स्कूल के अंदर और बाहर दोनों जगह है, हालांकि लड़कों के दोस्तों की संख्या (89%) लड़कियों की दोस्तों की संख्या (77%) की तुलना में अधिक है। ऐसी लड़कियों की संख्या (9%) भी लड़कों की तुलना(17%) में अधिक थी, जिनकी दोस्ती सिर्फ स्कूल के बच्चों के साथ थी और यही बात स्कूल से बाहर के दोस्तों के संदर्भ में भी नजर आयी (लड़की:4%, लड़के: 2%)।

चित्र 2: समय विभाजन

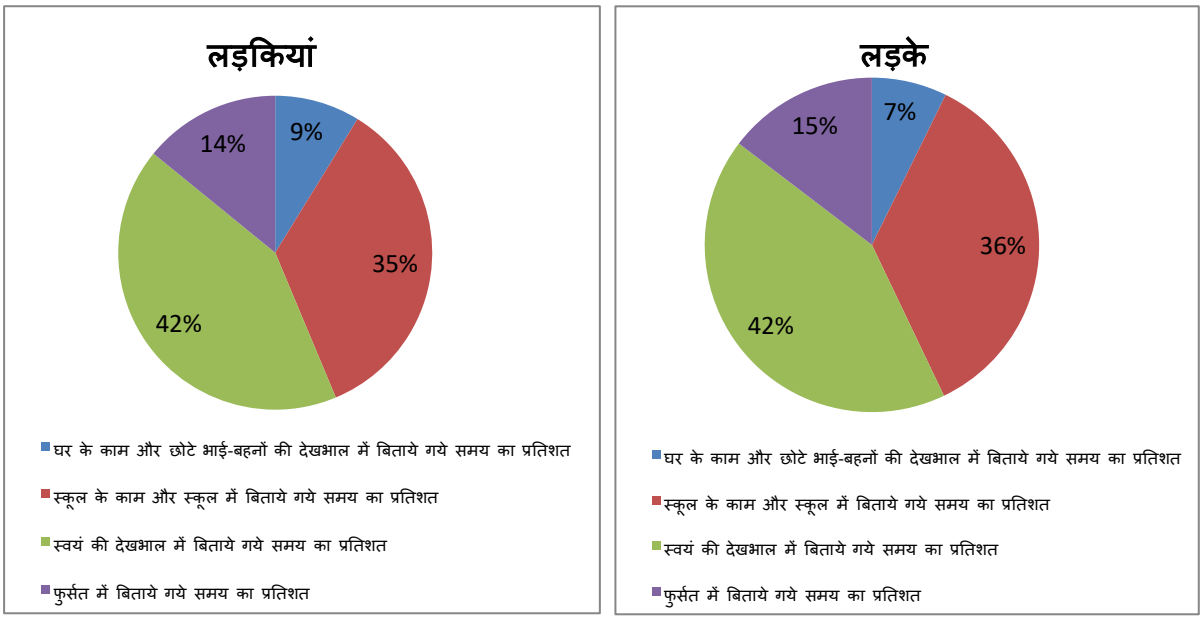

यह बात भी हमारे सामने आयी कि इतने बड़े दायरे के बावजूद अधिकतर विद्यार्थी अपने दोस्तों के साथ एक–दूसरे को मदद करने जैसी किसी गतिविधि में शामिल नहीं होते हैं (लड़कियां: 68%, लड़के: 72%)। इसके बजाय वे किसी भी तरह की मदद के लिए अपनी मां के पास ही जाते हैं। उदाहरण के लिए लड़कियों (54%) और लड़कों (46%) के लिए उनकी मां ही मदद का आधार होती हैं। दरअसल यह संकेत बहुत साफ था कि मां और परिवार की अन्य महिला सदस्य बच्चों की सहायता का मुख्य स्रोत हैं। इन लैंगिक प्राथमिकताओं को समझने के लिए हमने उनके लैंगिक दृष्टिकोण, विश्वास और व्यवहार की तरफ ध्यान दिया।

6. लैंगिक दृष्टिकोण, विश्वास और व्यवहार

लैंगिक भूमिका और इसके प्रति रवैये को लेकर उनकी समझ का अनुमान लगाने के लिए हमने विद्यार्थियों से ऐसी स्थितियों से संबंधित सवाल किये, जिससे उनके मन के आंतरिक संवाद को समझा जा सके। हम इन सवालों के जरिये उनकी जानकारी व समझ का अनुमान लगाना चाहते थे। हमारे सवालों के अंतर्गत लड़कों व लड़कियों की शारीरिक शक्ति और क्षमता के प्रति उनके रवैये से लेकर पेशे का चुनाव, स्वास्थ्य के प्रति लिंग के आधार पर उनका दृष्टिकोण, शर्म को लेकर उनके विचार, हिंसा, शादी और जाति से जुड़े विषय शामिल थे। हमारे सामने बहुत दिलचस्प तथ्य आये, जिसकी चर्चा नीचे की गयी है;

6.1 शारीरिक शक्ति व क्षमताएं

हमने किशोर बच्चों से सवाल किया कि दौड़ में किसकी जीत होगी– लड़का या लड़की। उनके जवाबों को जब हमने लिंग आधारित परिप्रेक्ष्य में देखा, तो पाया कि 25% लड़कों की तुलना में 58% लड़कियों ने कहा कि लड़की जीतेगी। वहीं 37% लड़कियों की तुलना में 72% लड़कों का मानना था कि लड़के जीतेंगे। इस जवाब से हम लोगों को कोई आश्चर्य नहीं हुआ। लिंग आधारित विभाजन के अपने सैम्पल से तुलना करके देखने पर हमने पाया कि वैसे तो ऐसी लड़कियों की संख्या बहुत थी, जिन्होंने कहा कि लड़कियां जीतेंगी, लेकिन लड़कों से अधिक संख्या ऐसी लड़कियों की थी जिन्होंने कहा कि लड़के ही दौड़ जीतेंगे। जब हमने उनके जवाबों के पीछे के कारण जानने की कोशिश की, तो देखा कि अधिकतर किशोर बच्चों को लगता है कि लड़के ज्यादा तेज दौड़ सकते हैं। जिन बच्चों ने कहा था कि लड़कियां जीतेंगी, उनके अनुसार 'लड़कियां भी लड़कों जितना तेज दौड़ सकती हैं'।

लिंग आधारित क्षमताओं के संदर्भ में उनकी सोच को और गंभीरता से समझने के लिए हमने बच्चों से यह सवाल भी किया कि गणित में लड़के क्या लड़कियों से बेहतर होते हैं और 65% बच्चों ने सहमति जतायी। लिंग आधारित एक अन्य

घिसी–पिटी कहावत की छानबीन करने के लिए हमने पूछा कि क्या पुरुषों की अपेक्षा स्त्रियां जल्दी रोती हैं, क्योंकि वे अधिक भावुक होती हैं। अधिकतर बच्चों (86%) का मानना है कि यह सही है और इस संदर्भ में यह विचार जतानेवाले लड़के और लड़कियों की संख्या में खास फर्क नहीं था (लड़कीः 86%, लड़केः 88%)। हमने देखा कि नेतृत्व की क्षमता के विषय में भी लिंग आधारित आरोपित रवैया मौजूद है। जब यह पूछा गया कि क्या स्त्री की अपेक्षा पुरुष बेहतर मुख्यमंत्री होते हैं, तो 65% किशोर बच्चों ने माना कि स्त्री की अपेक्षा पुरुष बेहतर मुख्यमंत्री होते हैं। दरअसल 71% लड़कों ने कहा कि पुरुष बेहतर मुख्यमंत्री होते हैं, जबकि 33% लड़कियों ने इससे अपनी असहमति जतायी। क्षमता और योग्यता को लेकर बच्चों का यह रवैया क्या उनके अपने भविष्य की कल्पना या सपनों को भी प्रभावित करता है, यह समझने के लिए हमने उनसे जीविका को लेकर उनकी उम्मीदों और श्रम विभाजन से संबंधित कुछ विशेष सवाल पूछे।

6.2 भविष्य में व्यवसाय को ले कर उनके सपने व कार्य विभाजन

घर और बाहर, दोनों जगह श्रम या काम के लिंग आधारित स्वरूप से संबंधित उनकी जानकारी को समझने के लिए हमने बच्चों से खास स्थिति पर सवाल किये। हमारा पहला सवाल था कि अगर एक लड़की क्रिकेट खिलाड़ी बनना चाहती है, तो क्या बड़े होकर उसे इसके लिए कोशिश करनी चाहिए। हमें आश्चर्य हुआ, जब 71% किशोर बच्चों ने कहा कि उसे इसके लिए प्रयत्न करना चाहिए। बहुत सारी लड़कियों (74%) के अनुसार लड़की क्रिकेट खिलाड़ी बन सकती है और चकित करनेवाली बात यह थी कि आधे से अधिक लड़कों (66%) ने भी इस बात का समर्थन किया।

दूसरे परिदृश्य में हमने पूछा कि अगर कोई लड़का नर्स बनना चाहता है, तो क्या बड़े होकर उसे इसके लिए कोशिश करनी चाहिए। इसकी प्रतिक्रिया में हमें लिंग आधारित पक्षपातपूर्ण उत्तर मिले। करीब 49% बच्चे ऐसा नहीं सोचते कि लड़कों को नर्स बनना चाहिए। इसमें 62% संख्या लड़कों की थी। दिलचस्प बात यह थी कि केवल 43% लड़कियां ही ऐसा सोचती हैं कि लड़कों को नर्स नहीं बनना चाहिए। वास्तव में 50% से अधिक लड़कियों ने कहा कि अगर कोई लड़का नर्स बनना चाहे तो उनको नर्स का काम करना चाहिए। इस बात का समर्थन न करनेवाले बच्चों की संख्या (90 %) बहुत अधिक थी। उनका मानना था कि लड़को को नर्स का काम नहीं करना चाहिए, क्योंकि वे नर्स बन ही नहीं सकते और यह कार्य पुरुषों के लिए उपयुक्त चुनाव नहीं है।

हम यह भी जानना चाहते थे कि घर के काम में भी क्या लिंग आधारित वर्गीकरण ऐसे ही होता है। हमने बच्चों को एक दृश्य बताया, जिसमें एक लड़का घर आकर देखता है कि उसका भाई रसोई में खाना बना रहा है, क्योंकि उसकी भाभी अपनी दोस्तों के साथ फिल्म देखने गयी है। इस परिस्थिति पर बच्चों के विचार पूछे गये। आधे से अधिक बच्चों ने (करीब 58%) कहा कि रसोई का काम मुख्यतः स्त्रियों का है, लेकिन किसी खास परिस्थिति में, जब घर पर कोई स्त्री मौजूद नहीं है, तो भाई द्वारा खाना बनाना बिलकुल सही है। करीब 44% बच्चों ने कहा कि भाई को खाना नहीं बनाना चाहिए, क्योंकि परिवार में खाना बनाने की जिम्मेदारी स्त्रियों की होती है। इन विश्लेषणों से यह तो स्पष्ट हो जाता है कि घर व बाहर, दोनों जगह काम के विभाजन को लेकर बच्चों की सोच बिलकुल स्पष्ट है और पारिश्रमिक के लिए या घर में देखभाल के काम को लेकर उनकी धारणा लैंगिक भेदभाव से प्रभावित है।

6.3 स्वास्थ्य

स्वास्थ्य समाज के अधिकारविहीन और विशेषाधिकार प्राप्त लोगों को अलग–अलग बांटने में एक मुख्य विभाजक का काम करता है। परिवार में लड़के–लड़कियों में अंतर को ले कर भी यह बात सही है, जहां भोजन के बंटवारे में भेदभाव दिखायी देता है, साथ ही स्त्रियों के शरीर की कुदरती व स्वभाविक प्रक्रिया को एक बड़े स्तर पर कलंक की तरह माना जाता है। इन दोनों तरह की सोच को संबोधित करने के लिए हमने उनसे सिलसिलेवार प्रश्न किये। पहले हमने स्थिति से संबंधित एक दृश्य योजना बनायी, जिसमें उन्हें चुनने के लिए विकल्प दिये गये कि– लड़की को पूरा प्लेट खाना मिलता है; आधा प्लेट मिलता है; लड़का और लड़की दोनों को पूरा प्लेट खाना मिलता है। हमने पाया कि 71% विद्यार्थियों ने कहा कि लड़की को पूरा प्लेट खाना मिलना चाहिए। 18% बच्चों के अनुसार लड़की को आधा प्लेट खाना मिलना चाहिए और 10% ने कहा कि लड़का और लड़की दोनों को एक समान खाना मिलना चाहिए। जब हमने बच्चों के विचार को लैंगिक आधार पर देखा, तो पाया कि 76% लड़कियां चाहती थीं कि लड़की को पूरा प्लेट खाना मिले। निराशाजनक बात यह थी कि 23% लड़कों का यह मानना था कि लड़की को पूरा प्लेट खाना नहीं मिलना चाहिए।

हमने मासिक धर्म के बारे में बच्चों की जानकारी और जागरूकता का स्तर पता किया। इसके लिए हमने उनसे लड़कियों के हर महीने होनेवाले मासिक धर्म से संबंधित 'सच या झूठ' वाला सवाल पूछा। बच्चों की आधे से थोड़ी कम संख्या (45%) को इसका जवाब नहीं पता था, 44% ने सहमति जतायी और 10% बच्चों को लगा कि हमने गलत कहा है। इन जवाबों का लिंग आधारित वर्गीकरण करने पर हमने पाया कि आधे से थोड़ी अधिक संख्या (57%) में लड़कियां मासिक धर्म के बारे में जानती हैं, लेकिन चिंता की बात है कि 70% लड़कों को इसका जवाब नहीं पता था।

मासिक धर्म से संबंधित हमारा एक सवाल था कि क्या मासिक धर्म के समय महिलाओं का स्पर्श किया जा सकता है। हमने पाया कि 37% इस बात से सहमत नहीं थे कि मासिक धर्म के समय महिलाओं का स्पर्श नहीं करना चाहिए, 34% इस बात से सहमत थे और 28% बच्चों को जवाब नहीं पता था। लड़कों (26%) की तुलना में ऐसी लड़कियों की संख्या (39 प्रतिशत) अधिक थी, जिन्हें यह कथन सही लगा। बच्चों को सैनिटरी पैड की तसवीर दिखाने पर हमने पाया कि सिर्फ 28% बच्चे ही इसकी सही पहचान कर पाये। इस विषय में लड़कों की अनभिज्ञता के दो कारण हो सकते हैं: (1) उन्हें सचमुच नहीं पता, और (2) लड़कों के लिए संवेदनशील या वर्जित समझे जानेवाले विषय पर जवाब देने में उन्हें हिचकिचाहट हुई। कारणों पर ध्यान दिये बिना भी ये प्रवृत्ति बताती है कि स्वास्थ्य संबंधी शिक्षा के बावजूद, बच्चे स्वास्थ्य और मासिक धर्म की मूल धारणा से अनभिज्ञ हैं। यह बहुत महत्वपूर्ण है, इसलिए इस विषय को लेकर चुप्पी को तोड़ना जरूरी है, सिर्फ लड़कियों की खातिर ही नहीं बल्कि लड़कों को भी इस प्रक्रिया में सहयोगी बनाना आवश्यक है।

तालिका 6: लिंग आधारित मनोभाव और व्यवहार

लिंग आधारित मनोभाव		लड़का	लड़की	कुल संख्या
शारीरिक क्षमता				
गुड़िया और बबलू, दोनों ने दौड़ में हिस्सा लिया। उनकी उम्र एक समान है और वे एक ही इलाके में रहते हैं। आपके अनुसार दोनों में से कौन पहले स्थान पर आयेगा?	गुड़िया जीतेगी	25%	58%	46%
	बबलू जीतेगा	72%	37%	49%
आमतौर पर लड़कों की शारीरिक शक्ति लड़कियों से अधिक होती है	सही	84%	80%	82%
	ग्लत	15%	18%	17%
योग्यता और लिंग आधारित भूमिका				
लड़के गणित में तेज होते हैं।	सही	76%	60%	65%
	गलत	23%	39%	33%
लड़कियां आमतौर पर लड़कों से अधिक रोती हैं, क्योंकि वे ज्यादा भावुक होती हैं।	सही	88%	85%	86%
	गलत	9%	12%	11%
गुड़िया बड़े होकर पेशेवर क्रिकेट खिलाड़ी बनना चाहती है, क्या वह ऐसा कर सकती है?	ळां	66%	74%	71%
	नहीं	32%	19%	23%
बबलू बड़ा होकर नर्स बनना चाहता है, क्या वह ऐसा कर सकता है?	ळां	37%	50%	46%
	नहीं	62%	43%	49%
क्या आप इसे पहचान सकते हैं?	सैनिटरी नेपकिन	10%	37%	28%
	स्लीपर/सोल	5%	1%	2%
	डायपर	13%	3%	6%
	पता नहीं	65%	57%	60%
लड़कियों को आमतौर पर लड़कों की अपेक्षा कम खाने और पोषण की जरूरत होती है।	सही	43%	34%	37%
	गलत	55%	61%	59%
12–13 वर्ष की आयु के बाद महीने में एक बार लड़कियों को रक्तस्राव होता है, जिसे मासिक धर्म कहते हैं।	सही	19%	57%	44%
	गलत	8%	11%	10%
	पता नहीं	70%	32%	45%

मासिक धर्म के समय लड़कियां अपवित्र होती हैं, उनका स्पर्श नहीं करना चाहिए।	सही	26%	39%	34%
	गलत	33%	39%	37%
	पता नहीं	41%	21%	28%
सम्मान, शर्मिंदगी और हिंसा				
पति अगर अपनी पत्नी को पीटते हैं, तो उन्हें जेल भेज देना चाहिए।	सही	79%	79%	79%
	गलत	19%	19%	19%
अगर पत्नी पति की आज्ञा मानने से मना करती है, तो पति का पीटना जायज़ है।	सही	62%	48%	53%
	गलत	36%	48%	44%
सिर्फ लड़कियों पर ही यौन संबंधी हमले होते हैं/उनका बलात्कार होता है।	सही	58%	50%	53%
	गलत	33%	39%	37%
	पता नहीं	9%	10%	10%
गुड़िया और बबलू दोनों को दौड़ के लिए हाफ पैंट यानी शॉर्ट्स पहनना है। गुड़िया की दोस्तों ने इसके लिए मना किया, क्योंकि लोग देख कर हंसेंगे। गुड़िया को क्या करना चाहिए?	हाफ पैंट पहनना चाहिए	28%	41%	36%
	हाफ पैंट नहीं पहनना चाहिए	70%	55%	60%
शादी और जाति प्रथा				
लड़कियां 18 वर्ष आयु के बाद अपनी पसंद से शादी कर सकती हैं (किसी भी जाति, वर्ग या धर्म के लड़के के साथ)	सही	31%	35%	34%
	गलत	66%	62%	63%
भारत के कानून में लड़कियों की शादी की आयु 18 वर्ष है।	सही	92%	89%	90%
	गलत	7%	6%	7%
	पता नहीं	2%	4%	3%

स्रोतः सीबीपीएस आधारभूत सर्वेक्षण, 2018

6.4 हिंसा, शर्मिंदगी और विवाह

लिंग आधारित सोच के केंद्र में हिंसा, शर्मिंदगी और शादी की अवधारणा होने के कारण हम इस दिशा में हिंसा को लेकर बच्चों के दृष्टिकोण को समझना चाहते थे। सबसे पहले हमने उनसे पूछा कि पत्नी को पीटने के अपराध में क्या पति को जेल भेज देना चाहिए और फिर दूसरा सवाल कि बात नहीं मानने पर क्या पति द्वारा अपनी पत्नी को पीटना उचित है। हमने पाया कि 79% विद्यार्थी पहले कथन से सहमत थे। इस संबंध में लड़के और लड़कियों के जवाब में खास अंतर नहीं था। दूसरे सवाल पर आधे से थोड़े अधिक बच्चे (53%) सहमत थे, लेकिन एक बड़ी संख्या (44%) ऐसे बच्चों की भी थी, जो इससे सहमत नहीं थे। जब हमने बच्चों के इस रवैये को लिंग आधारित नजरिये से देखा, तो पता चला कि लड़कियों की तुलना (48%) में ऐसे लड़कों की संख्या (62%) अधिक थी, जो पति की बात नहीं मानने पर अपनी पत्नी को पीटना जायज समझते हैं। यौन हिंसा से संबंधित उनकी जानकारी और समझ के बारे में जानने के लिए, जब उनसे पूछा गया कि क्या सिर्फ महिलाएं ही बलात्कार का शिकार होती हैं, तो 53% बच्चे इससे सहमत थे। इसे सहमत होनेवालों में लड़कियों (50%) की तुलना में लड़कों की संख्या (58%) अधिक थी।

हिंसा, शर्मिंदगी और शादी के बीच के संबंध पर उनकी सोच जानने के लिए हमने बच्चों से सवाल किया कि क्या ऐसा कहना सही है कि जो स्त्रियां यौन हिंसा का शिकार होती हैं, अधिकतर मामलों में गलती उन्हीं की होती है। खुशी की बात यह रही कि अधिकतर किशोर बच्चों (65%) ने इस बात से अपनी असहमति जतायी। असहमति जताने वाले बच्चों में लड़कों (59%) की अपेक्षा लड़कियों की संख्या (68%) थोड़ी ज्यादा थी।

शादी और जाति की परिपाटी से जुड़े कुछ पहलुओं की छानबीन के लिए हमने उनसे कुछ आसान सवाल किये। सबसे पहले हमने यह जानना चाहा कि क्या बच्चों को शादी की कानुनी उम्र का पता है और ऐसा लगा कि अधिकतर बच्चों

(90%) को यह जानकारी है। इसके बाद अगला प्रश्न था कि क्या पुरुष और स्त्री जाति व धर्म की परवाह किये बगैर अपनी मर्जी से शादी कर सकते हैं। इसके जवाब में हमने पाया कि 63% विद्यार्थी इस कथन से असहमत थे, जिसमें लड़के (66%) और लड़कियों (62%) की संख्या में खास फर्क नहीं था, जो इस बात की ओर इंगित करता है कि किशोर अवस्था में अभी–अभी कदम रखनेवाले बच्चों के दिमाग में जातिगत और अंतरजातीय विवाह को लेकर मजबूत मान्यताओं से जुड़ी सोच एकदम स्पष्ट है।

आगे हम जाति से जुड़ी कुछ खास मान्यताओं के बारे में बात करना चाह रहे थे। हमने बच्चों से पूछा कि क्या वे इस बात से सहमत हैं कि तथाकथित निम्न जाति के लोगों को स्पर्श नहीं करना चाहिए। मजे की बात यह थी कि 70% बच्चे इस बात से सहमत नहीं थे। असहमति जतानेवालों में लड़कों (64%) के अनुपात में लड़कियों की संख्या (73%) अधिक थी। जाति आधारित रवैये को और ठीक तरह से समझने के लिए विद्यार्थियों के सामने एक और बयान रखा कि तथाकथित 'उच्च जाति' के लोग तथाकथित 'निम्न जाति' के लोगों से ज्यादा होशियार होते हैं। हमने बच्चों को उनकी 'सहमति' व 'असहमति' बताने के लिए कहा। उनकी राय इस पर बंटी हुई दिखी, जहां 'सहमति' व 'असहमति' दोनों में एक समान 49% बच्चों ने जवाब दिये।

निष्कर्ष में हमने पाया कि बच्चों का रवैया समाज में मौजूद लिंग आधारित नजरिये, सोच और व्यवहार का प्रतिबिंब है। फिर इसमें आश्चर्य की कोई बात नहीं है कि इन विषयों पर अपनी एक लिंग आधारित पहचान बनाते समय बच्चे सामाजिक धारणाओं से प्रेरित होते हैं।

7 उपसंहार

हमारे कार्यक्रम का लक्ष्य एक परामर्श मॉडल तैयार करना है, जिससे शिक्षा और सशक्तिकरण के बीच की कड़ी और मजबूत होगी। हम यह मॉडल इस तरह तैयार कर रहे हैं कि किशोर बच्चों को अपना जीवन संवारने के लिए जगह, साधन और समय उपलब्ध कराया जा सके। इसे और प्रभावशाली और उचित ढंग से करने के लिए हमें उनके जीवन के बारे में कुछ बुनियादी जानकारी चाहिए थी–वे किस स्कूल में जाते हैं, वे क्या जानते हैं, उनके परिवार में कौन–कौन हैं और वे क्या सोचते हैं आदि। किशोर बच्चों के साथ संवाद शुरू करने के लिए यह आधार हमें पहला कदम उठाने में मदद करता है।

यह जानकारी बताती है कि हमारे अध्ययन में शामिल बच्चे साधनहीन हैं और उन्हें घर और विद्यालय में बहुत सी सुविधाओं की आवश्यकता है। हम यह देख सकते हैं कि विद्यालयों में बेंच, शौचालय, पढ़ने के लिए कक्षा और किताबों के लिए पुस्तकालय जैसी मौलिक सुविधाएं उपलब्ध नहीं हैं। हमने यह भी देखा कि स्कूल प्रबंधन भी संसाधनों की कमी से परेशान हैं, खासकर शिक्षकों की कमी से। हालांकि राज्य सरकार की नीतियां प्रगतिशील हैं, लेकिन एक ऐसी उत्तरदायी प्रणाली व्यवहार में लाना भी आवश्यक है, जो काम करे और एक नया शैक्षणिक माहौल तैयार हो।

हम यह भी देख सकते हैं कि भौगोलिक स्थितियों का असर परिवारों की सामाजिक व आर्थिक स्थिति पर पड़ता है, लिहाजा उनके बच्चे भी प्रभावित होते हैं। हमने पाया कि गांव में रहनेवाले बच्चों की अपेक्षा शहरों के तुलनात्मक रूप से बेहतर घरों में रह रहे बच्चों का रहन–सहन थोड़ा उच्च स्तर का होने की संभावना होती है और उनके माता–पिता भी प्रशिक्षित हो सकते हैं, बेहतर नौकरी उनके पास होती है। इन बच्चों का भाषा कौशल (खासकर अंगरेजी) भी अच्छा होने की संभावना ज़्यादा होती है।

जब हमने बच्चों की विशिष्टताओं पर ध्यान दिया तो पाया कि बच्चे अपने परिवार और दोस्तों के साथ बहुत व्यस्त जीवन बिताते हैं। यह तथ्य भी सामने आया कि बच्चों के जीवन का अधिकतर समय किसी ना किसी तरह स्कूल में और पढ़ने की गतिविधियों में बीतता है। इसके अतिरिक्त बच्चों द्वारा घर में किये जाने वाले देखभाल के कार्यों में लिंग आधारित विभाजन साफ दिखता है। स्पष्ट है कि समाज में लड़के और लड़की के बीच जो भेदभाव है, यह उसी का नतीजा है।

हमने देखा कि जब तक बच्चे 11–14 वर्ष की उम्र में प्रवेश करते हैं, तब तक उनकी सोच एक हद तक सुदृढ़ हो चुकी होती है और उस सामाजिक मानसिकता को और मजबूत करती है, जो स्त्री व लड़कियों को दूसरे दर्जे का नागरिक समझते हैं। अगर हम शारीरिक क्षमता और योग्यता को लेकर बच्चों की समझ को देखें या किसी पेशे के लिए काबिलियत के बारे में उनके विचार जानें या सफाई के काम किसकी जिम्मेदारी है और हिंसा की पैरवी जैसा उनका नजरिया देखें, तो बात समझ में आती है कि बच्चे उसी पितृसत्तात्मक समाज के मानदंडों को दुहरा रहे हैं।

बच्चों के लिंग आधारित रवैये के बारे में ये जानकारियां हमारे विश्वास को और मजबूत करती हैं कि एक ऐसे परामर्श आधारित मॉडल की तुरन्त आवश्यकता है, जो बड़े परिप्रेक्ष्य में जानकारी उपलब्ध कराये और बच्चे इस दुनिया के बारे में अपनी राय बना सकने में सक्षम हों। इसलिए हमारा परामर्श मॉडल इन तत्कालीन संदर्भों के साथ काम करेगा और ये निष्कर्ष एमएमएम के प्रारूप को प्रभावित करेंगे। बच्चों को वैकल्पिक स्थान, संवाद और साधन उपलब्ध कराने के लिए यह बहुत सही उम्र है, ताकि वे पुरानी मान्यताओं पर सवाल उठाएं और इनके लिए उचित कदम भी उठा सकें।

एमएमएम का एक मकसद बच्चों के साक्षरता स्तर पर ध्यान देना है। हमारे परामर्श मॉडल का प्रारूप पहले यह सोच कर तैयार किया गया था कि बच्चे प्रारंभिक साक्षरता से परिचित होंगे। हालांकि हम साफ तौर पर यह देख सकते हैं कि इसके बावजूद कि बच्चे सीखने के लिए उत्सुक हैं और बिना किसी साक्षरता संबंधी सहयोग के चल रही विद्यालयी व्यवस्था में भी प्राथमिक ज्ञान हासिल करने की पूरी कोशिश करते हैं, लेकिन परिणाम कुछ खास नहीं निकले हैं। इस चुनौती से निपटने के लिए हमने साक्षरता आधारित गतिविधियों को नये तरीके से तैयार किया। हालांकि हर बार सफलता नहीं मिली, लेकिन बच्चों की भागीदारी इसमें बढ़ रही है।

एक अन्य पहलू शिक्षिका/शिक्षक और विद्यार्थी के बीच का संबंध है। चूंकि शिक्षिका/शिक्षक अकसर समुदाय में मौजूद सामाजिक कायदों और मान्यताओं के पक्षधर होते हैं, इसलिए यह सुनिश्चित करना आवश्यक है कि वे भी गतिविधियों में दिलचस्पी लें। हम यह साफ देख पा रहे थे कि शिक्षकों की भागीदारी से गतिविधियां पूरी तरह से बदल जाती थीं, ज़्यादा सजग हो उठती थीं। उन कक्षाओं में जहां हम काम कर रहे हैं, शिक्षकों की उदासीनता और बेपरवाही एक सच्चाई है, लेकिन हमने पाया कि उत्सुक शिक्षकों के पास भी समय नहीं होता। अकसर वे खुद ही काम के बोझ से लदे होते हैं और उनका समय लेना मुश्किल होता है। यह सुनिश्चित करना भी आवश्यक है कि उन्हें इस कार्य के लिए समय दिया जाए, ताकि वे बच्चों के साथ इस मॉडल के अनुरूप काम कर सकें।

हमारी एक प्राथमिकता यह है कि अध्यापन कला में लैंगिक मुद्दों को अनदेखा न किया जाए। कक्षा में लड़के और लड़कियों की मौजूदगी व संपर्क–व्यवहार में लैंगिक भेदभाव अनुभव किया जा सकता है, क्योंकि यह उनकी मानसिकता में गहरे पैठा है। जरूरत इस बात पर ध्यान देने की है कि इन मान्यताओं और संवादों को उनके दिमाग से हटाकर बच्चों को विभिन्न प्रकार के खेल, गतिविधियों और आत्मचिंतन अभ्यासों के जरिये इन मान्यताओं के औचित्य के बारे में सोचना शुरू करने के लिए प्रेरित किया जाए।

संक्षेप में यह कि हमें लगता है कि इस आधारभूत अध्ययन ने हमें बुनियादी जानकारी उपलब्ध करायी है, जिसके जरिये आगे की योजना बनायी जा सकती है। इससे हमें वास्तविकताओं की जानकारी मिली है व किशोर बच्चों के सामाजिक अनुभवों की परतों को भी समझने में सहायता मिली है। हम कोई भी परामर्श मॉडल तैयार करें, उसमें इस बात पर ध्यान देने की जरूरत है कि वह सिर्फ सैद्धांतिक और व्यवहारिक ज्ञान पर आधारित न हो, बल्कि उसमें यह ज्ञान भी शामिल हो, ताकि बच्चे आसपास की दुनिया से ज़्यादा जुड़ें और अपने लिए अपनी तरह का भविष्य गढ़ सकें।

शोध व लेखन टीम: **निवेदिता मेनन, नेहा घटक, अचला यारेसीम, अनुशा अय्यर और ज्योत्स्ना झा।**

सर्वेक्षण एजेंसी: सुनय कन्सलटेंसी

आभार: टीम परामर्शदाताओं–रंजीता सिन्हा और नुसरत जहां–को धन्यवाद देना चाहती है, जिन्होंने इस रिपोर्ट में अपना मूल्यवान सहयोग दिया। हम रिपोर्ट को तैयार करने में सहयोग के लिए मृणालिका आर. पंडित, उषा पी वी और राजेश सी एस के भी आभारी हैं। श्री आर एस सिंह और श्री सैयद अब्दुल मोईन के मूल्यवान सहयोग और सहायता के बिना हम इस काम का बीड़ा नहीं उठा सकते थे, उन दोनों को निरंतर सहयोग के लिए धन्यवाद। बिहार एजुकेशन प्रोजेक्ट काउंसिल (बिहार शिक्षा कार्यक्रम परिषद्) के जिला और राज्य स्तरीय कार्यालय के सभी प्रशासकीय अधिकारियों, खासकर पटना और मुज़फ्फरपुर के जिला शिक्षा अधिकारियों को इस प्रोजैक्ट के प्रति मुक्त व सकारात्मक दृष्टिकोण के लिए हमारा आभार।